राम संदेश

भक्ति, ज्ञान एवं कर्मयोग की आध्यात्मिक पत्रिका

वर्ष 68 जुलाई-सितम्बर 2020 अंक 2

रामाश्रम सत्संग (रजि.), ग़ाज़ियाबाद

विषय सूची

क्रमांक		पृष्ठ
1.	कबीर साहब की वाणी	1
2.	परमसंत महात्मा रामचंद्र जी महाराज सम्बंधित	2
3.	मन, विचार शक्ति और मुक्ति	5
4.	ईश्वर प्राप्ति का सच्चा और सीधा रास्ता	8
5.	मृत्यु का डर और मोक्ष	11
6.	पूज्य डॉ. शक्ति सक्सेना से सम्बंधित प्रसंग	13
7.	श्रद्धांजलि (डॉ. शक्ति सक्सेना)	17
7.	अबु हाफ़िज़ खुरासानी	19
8.	Playing Worldly Game with Divine Captain	24

ॐ

राम संदेश

वर्ष 68 जुलाई–सितम्बर 2020 अंक–2

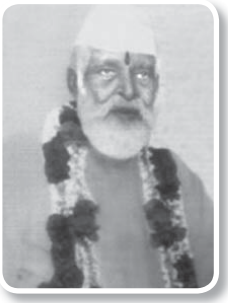

संस्थापक : ब्रह्मलीन परमसंत डॉ. श्रीकृष्ण लाल जी महाराज
संरक्षक : ब्रह्मलीन परमसंत डॉ. करतार सिंह जी साहब
ब्रह्मलीन परमसंत डॉ. शक्ति कुमार सक्सेना जी
सम्पादक : श्री उमा कान्त प्रसाद (आचार्य एवं अध्यक्ष)

कबीर साहब

कर नैनो दीदार महल में प्यारा है ।।टेक।।
काम क्रोध मद लोभ बिसारो,
सील संतोष छिमा सत धारो ।
मद्य मांस मिथ्या तजि डारो,
हो ज्ञान घोड़े असवार, भरम से न्यारा है ।।1।।

परमसंत महात्मा रामचन्द्र जी महाराज.....

मौलाना फजल अहमद खां साहब का महात्मा रामचन्द्र जी (दादा गुरु) को आध्यात्मिक सन्देश एवं आशीर्वाद

यक चश्मे जदन ग़ाफ़िल अजां माह न बाशी !
शायद कि निगाहे कुनद आगाह न बाशी !!

अर्थ– एक क्षण के लिए भी उस चन्द्रमुख से ग़ाफ़िल न हो। शायद वह तेरी ओर देखे और तू जान भी न पाए। फिर शायद सारी उम्र इस हानि की पूर्ति न हो।

बेटे, किसी कार्य में चिन्तित न होना। ऐसा कोई कार्य नहीं जिस पर दृढ़ संकल्प किया जाये और वह पूरा न हो। ऐसी कोई कठिनाई नहीं है जो सरल न हो सके। और क्यों न हो, क्योंकि प्रेम और विश्वास में तुम जैसा कोई नहीं है। आजकल गुरु और चेला नाम को भी बाकी नहीं रहे। लोग जहाँ और खेल खेलते हैं, वहाँ यह खेल भी खेलते हैं। सच्चा चेला उपलब्ध नहीं है और यही दशा गुरुओं की भी है। समर्पण करने वाले बहुत थोड़े चेले हैं।

आपसे हो सके तो पूर्वज गुरुदेवों के नाम को बदनाम न करना। लोगों से मेहरबानी, हमदर्दी और करुणा का व्यवहार करना। फिर भी ये घृणा करें तो उनके लिए प्रार्थना करना। यदि ऐसा न कर सको तो परमात्मा की याद में लगे रहना। अपनी भौतिक देह और आशाओं को नाशवान समझना और अपना वास्तविक रूप देखने में लगे रहना और किसी से सरोकार नहीं। यदि कोई आ जावे तो उसकी सेवा कर दी और न आवे तो कोई चिंता नहीं।

मैं तुमको अपना उत्तराधिकारी समझता हूँ और मेरा संकल्प इतना दृढ़ है कि मैं किसी कार्य को अनहोना ख़्याल नहीं करता। अपने सब सच्चे दोस्तों को बुलाकर हिम्मत करो और परमात्मा से प्रार्थना करो। पूर्ण प्रेम से एक दूसरे में लीन हो जाओ।

भाई, तुम स्त्रियों को सार्वजनिक कल्याण की ओर आकर्षित करना और अपने विचार से उनको नेक बनाना। अपनी दृष्टि सदा परमात्मा पर रखो। परमात्मा ने तुमको वह हिम्मत दी है कि यदि उसे मंजूर है तो जो संकल्प करोगे वही होकर रहेगा। तुम्हारे प्रारंभिक शिष्य दूसरों के अंतिम श्रेणियों के शिष्यों से अधिक उच्च हैं। जब परमात्मा चाहता है तब नवीन शिष्य भी उन्नति के अंतिम शिखर पर पहुँच जाते हैं।

परमात्मा की पवित्र सत्ता के अतिरिक्त हर एक से निराश हो जाओ। सब नाशवान है और सब की मित्रता और शत्रुता की एक सीमा है। इनमें दिल लगाना व्यर्थ है। संसार अस्थायी है। जो समय परमात्मा की याद में व्यतीत हो उचित है। तुम लोगों से मुझे हार्दिक प्रेम है और तुम्हारी थोड़ी सी भी तकलीफ असहनीय है। परमात्मा को मंजूर है तो मैं परलोक में भी तुम्हारा साथ दूँगा।

इंसानी जिन्दगी की मंजिल यह है कि ईश्वर में लय हो जाए और वहाँ पहुँचकर उस जगह स्थिति स्थिर कर ले, यही उसका कमाल (परिपूर्णता) है। यही (आदर्श) है। जब मनुष्य मार्ग तय करके सीमा में प्रवेश करता है तो इसको सालोकता और समीपता कहते हैं और यही लय अवस्था की सीमा में पहुँचना है। सारूपता को बका (स्थिति) और सायुज्यता को 'बकाये-बका' की (अटल स्थिति) कहते हैं और इन सबको देखते भालते हुए मार्ग तय करना 'रुहानी यात्रा' कहलाती है।

सबसे पहले वैराग्य हो जाये और जो कुछ संसार में है उससे मुँह मोड़ लेना यानी उपासना में ऐसी दशा में आ जाना जहाँ रंग, रूप और नाम न हो। और इस स्थिति में लय हो जाना जो सबका आधार हो और स्वयं उसका कोई आधार न हो किन्तु अपना आधार आप ही हो। यह सच्चा मिलाप और योग कहलाता है।

प्रस्तुति : स्वर्गीय श्री हरवंश लाल भायला, झुंझुनू (राजस्थान)

(राम सन्देश : मई-जून, 2001)

स्वयं को जानो- तुम शरीर नहीं, एक अनन्त आत्मा हो। इस वास्तविकता को प्रत्यक्ष अनुभव करने का नाम ही धर्म है।

-स्वामी विवेकानन्द

समर्थ सद्गुरु परमसंत महात्मा श्री रामचन्द्र जी महाराज के उर्दू में लिखित आध्यात्मिक लेख का हिंदी अनुवाद

- व्यवहार ठीक हुए बिना परमार्थ नहीं बनता। इसलिए आगे व्यवहार के सम्बन्ध में बतलाया जाता है। सुनो !
- सांसारिक और मानसिक रीति–रिवाज के पालन करने को व्यवहार कहते हैं। इसमें आचार–विचार, लौकिक और कौटुंबिक सभी रीतियाँ सम्मिलित हैं। हमारी रहनी सहनी कैसी हो, हम दूसरों के साथ कैसा व्यवहार करें, यह सब व्यवहार है। जो तुम्हारे इस मार्ग के लिए लाभदायक है। जिस पन्थ के तुम अनुयायी बने हो तथा जिस पर तुम जाना चाहते हो, उसके सम्पूर्ण मार्गदर्शन, रीति–रिवाज, और विधि–विधान को जाने बिना उससे लाभ नहीं उठा सकते।
- तुम्हें चाहिए कि समय–समय पर जो शिक्षाएं और निर्देश तुम सुनते हो, उन्हें लिख लो। कभी–कभी एकान्त में बैठकर विचार करो और उन्हीं के अनुसार जीवन को बिताओ। नित्य नियम जैसे संध्या–पूजा, भजन, उपासना को कभी भूलकर भी मत छोड़ो। यदि इस मार्ग के और साथी (सत्संगी) मौजूद हों एक साथ बैठकर इस कार्य को प्रेम और सच्ची निष्ठा के साथ करो। इससे तुम और भी जल्दी सफल हो जाओगे। अपने सत्संग का नियम बना लो और दृढ़ता से पालन करो। जो मनुष्य अकारण ही आलस्य अथवा भूल से नियमों का पालन न करें, उसे दण्ड दो। पश्चात्ताप करना, व्रत रखना, दान देना, इत्यादि। इस प्रकार के दण्ड देने का विधान सत्संगों में हुआ करता है।
- नेक कमाई करो। खेती–बाड़ी, नौकरी, व्यापार इत्यादि से जो आमदनी हो उसका एक भाग निकालो फिर उससे ऐसा काम करो जो दूसरों के लाभ के हों। तुम्हारे अकेले की उन्नति से कुछ नहीं होगा। स्त्री, बच्चों और अपने कुटुम्बियों को भी इधर लगाओ, जिससे तुम्हारे घर का वायुमंडल शुद्ध और शान्त हो। बिना सब लोगों में प्रेम हुए अशांति दूर नहीं हो सकती।
- ऐसा करने के लिए दिन रात में कोई एक समय ऐसा नियत करो कि उस समय सब मिलकर धर्म सम्बन्धी चर्चा, धार्मिक पुस्तकें पढ़ें और उनको दूसरों को समझाएं अथवा जो बातें कहीं बाहर से सुनकर आओ और वे सब के लिए लाभदायक हों तो उन्हें घर वालों को अवश्य बताओ।

प्रवचन गुरुदेवः डॉ. श्रीकृष्ण लालजी महाराज

मन, विचार-शक्ति और मुक्ति

तुम्हारा शरीर असल में तुम्हारे मन की धाराओं की घनी शक्ल है। जैसा तुम्हारा मन है, वैसा ही शरीर है। जैसे-जैसे तुम्हारा मन बदलता जाता है, वैसे ही तुम्हारा शरीर भी बदलता जाता है। बिना पूछे लोग बता सकेंगे कि तुम्हारे विचार कैसे हैं और तुम्हारा व्यवसाय क्या है। क्या चिड़ीमार को देखकर तुम्हें यह ख़्याल पैदा नहीं होता कि यह कोई निर्दयी आदमी है, या मछली पकड़ने वाले को देखकर उसके विचारों की दुर्गन्ध तुमको अनुभव नहीं होती? क्या किसी सन्त को देखकर तुम्हारे हृदय में प्रेम की लहर हिलोर नहीं मारने लगती, और उसके आदर के लिए हाथ नहीं उठ जाते?

जानवरों और बच्चों के दिल साफ होते हैं। बच्चे को प्रेम से देखो, उसके लिए अगर तुम्हारे दिल में प्रेम है तो वह तुम्हारे पास चला आयेगा, और अगर तुम्हारे दिल में नफरत है तो तुम्हारी सूरत देखकर रोने लगेगा या बुलाने पर पास नहीं आयेगा। मालिक के सच्चे भक्तों के दिल में हर एक प्राणी के लिए अथाह प्रेम होता है जिसके प्रभाव से भयंकर हिंसक पशु भी उनके सम्पर्क में आकर अपना स्वभाव छोड़ देते हैं। क्या तुम नहीं जानते कि शेर सन्तों के सम्पर्क में आकर उनके पास आदर पूर्वक बैठ जाता है। साँप चुपचाप पड़ा रहता है। ऐसा इस कारण है कि सन्तों के दिलों में प्रेम है, जिसकी धारें निकलकर प्राणी को घेरती हैं। उसी प्रभाव से सब उनसे प्रेम करने लगते हैं।

जैसा इन्सान का दिल होगा, उससे उसी प्रकार की धारायें निकल-निकलकर वायुमंडल में फैलेंगी, और जो कोई उस वायुमंडल में आयेगा, उस पर असर करेंगी। क्या तुमने नहीं सुना कि छोटे बच्चे विषैले साँपों से खेलते रहते हैं और साँप उनको ज़रा भी नुकसान नहीं पहुँचाते। अपने दिल में चिड़ियों से प्रेम करो, और देखो वो निडर होकर तुम्हारी थाली में से अपनी खुराक ले जायेंगी। बिल्लियों से प्रेम करो, वो तुमको खाना खाना मुश्किल कर देंगी, और वो तुमसे अपनी खुराक ले लेंगी।

जानवर तुम पर हमला करते हैं कि तुम्हारे दिल में उनके लिए दुश्मनी है। तुम दुश्मनी के बजाय मुहब्बत करो, तो वे तुम्हारे चारों तरफ पालतू कुत्तों के तरह फिरेंगे। असलियत जो कुछ है, तुम्हारे विचारों में है, और मन उन विचारों की मिली जुली

धरों का नाम है। शरीर उसका अक्स (प्रतिबिम्ब) है, क्योंकि तुम्हारी दृष्टि शरीर की तरफ है। वह तुमको दिखाई दे रहा है। दिल की तरफ से तुमने आँखें बन्द कर रखी हैं, इसलिए दिल तुमको दिखाई नहीं देता। शरीर दिखाई देता है, और सब कुछ उसी को समझ रहे हो। एक बच्चा शीशे में अपना अक्स देखकर, उसको दूसरा बच्चा ख़्याल करता है, और उससे खेल रहा है क्योंकि उसको अपने शरीर का ज्ञान नहीं है। जब उसको अपने शरीर का ज्ञान हो जायेगा शीशे को एक तरफ फेंक देगा और अपने शरीर की देखभाल में लग जायेगा। यही हाल तुम्हारा है।

अगर चाहते हो कि तुमको असली आनन्द मिले तो किसी वक्त के पूरे सन्त सद्गुरु से सम्बंध जोड़ो और उससे 'असल' के जानने का भेद मालूम करो। आहिस्ता–आहिस्ता तुम्हारा भ्रम दूर हो जायेगा, असली ज्ञान प्राप्त होगा, और हमेशा–हमेशा के लिए दुःख निवृत्ति हो जायेगी। यही मनुष्य जीवन का असली ध्येय है। तुम सोचो तुम कौन हो? तुम्हारी ग़रज़ यहाँ आने की क्या है? प्रकृति माँ दुनियाँ में हर काम किसी न किसी ग़रज़ से करा रही है। क्या तुमको यहाँ बेगरज़ भेजा गया है? नहीं, कभी नहीं। इसमें भी एक ग़रज़ छुपी हुई है। सोचो और फिर सोचो। अगर मालिक मेहरबान है तो तुमको जरूर असली ज्ञान प्राप्त होगा और मालिक तो हमेशा ही मेहरबान है पर दुर्भाग्य यह है कि हम उसकी तरफ झुकते नहीं हैं।

मुक्ति और निर्वाण, दोनों का मतलब करीब–करीब एक ही है। दोनों का मतलब आजादी का है। जिस्म पर निगाह है, इसी को सब कुछ समझ रखा है। अगर यह तन्दुरुस्त है तो खुशी है, अगर यह बीमार है तो तकलीफ है और परेशान व दुःखी है। अब खुशी का दारोमदार (निर्भरता) इन्द्रियों की ख़्वाहिशात और मन की वासनाओं के पूरा होने पर है। अगर ये ख़्वाहिशात (इच्छाऐं) पूरी होती हैं तो खुशी है, अगर नहीं तो दुख होता है।

परमात्मा ने रहम किया, असलियत और खुली, ख़्वाहिशात पर आहिस्ता–आहिस्ता क़ाबू पाया। अब तमाम ख़्वाहिशात क़ाबू में हैं, और अब खुशी का दारोमदार (निर्भरता) इन पर नहीं है। अब ख़्वाहिशात परेशान नहीं करती। राज़ी–बा–रज़ा है, (जो प्रभु की इच्छा है उसी में प्रसन्न है) हर हालत में खुश हैं, कोई परेशानी नहीं, तबियत में सकून (चैन) है। एक अजब आनन्द हर वक्त मालूम होता है, जिससे तबियत खुश रहती है। अब मन से निगाह ऊँची हो गई है, और अब इससे छुटकारा होकर निगाह आनन्द पर है। जब तक आनन्द आता रहता है, तबियत खुश है। जब आनन्द का आना बंद हो गया, तबियत फिर परेशान हो जाती है।

और आगे बढ़े, अब बेक़ैफी (उपरामता) की हालत है, इसमें न आनन्द है, न ग़ैर आनन्द, न किसी से प्यार है न दुश्मनी, न किसी के पैदा होने या मरने का रंज, न जिस्म से मतलब, न इन्द्रियों से ताल्लुक। न ख़्वाहिशात हैं न आनन्द की इच्छा, किसी चीज़ से वास्ता नहीं, हर हालत में एक रस है। जिन्दगी रहे या मौत आ जाये, दुनियाँ गुलज़ार रहे या आग बरसे, उनकी हालत में कोई फ़र्क इन बातों से नहीं आता। अपनी आत्मा में आप मग्न हैं, और सदा एकरस हैं। यही मुक्ति है- यही निर्वाण है। जहाँ अनानियत (अहंपना), खुदी, मेरा-तेरा सबकी जंजीरें टुकड़े-टुकड़े हो जाती हैं, जिन्दगी अपने आपको आला क़ानून के हवाले कर देती है।

इसकी तकमील (पूर्णता) एक जन्म में भी हो सकती है, और सैकड़ों जन्मों में भी नहीं हो सकती। जिनको ये हालत नसीब हो जाती है, उन्हीं को सन्त, औलिया, गुरु वग़ैरा नामों से पुकारते हैं। कफ़नी पहनने वाले, तिलक लगाने वाले, धुआँधार व्याख्यान करने वाले सच्चे सन्त नहीं होते। भेष बदल लेना बड़ा आसान है लेकिन मन व इन्द्रियों को जीत लेना किसी बिरले ही का काम है।

किसी शायर ने क्या खूब कहा है-

"किसी बेकस को ऐ बेदाद गर मारा तो क्या मारा,
जो खुद ही मर रहा हो उसको गर मारा तो क्या मारा।
बड़े मूज़ी को मारा नफ़्से अम्मारा गर मारा,
निहंगो अज़दहा-ओ शेरो-नर मारा तो क्या मारा,
न मारा आपको जो ख़ाक हो अकसीर बन जाता,
अगर पारे को ऐ अकसीर गर मारा तो क्या मारा।
दिल बदख़्वाह में था मारना, या चश्में बदबीं में,
फ़लक पर तीरे आह गर मारा तो क्या मारा।
गया शैतान मारा एक सिजदे के न करने में,
अगर लाखों बरस सिजदे में सर मारा तो क्या मारा।"

मुक्ति और निर्वाण को समझ लो। तर्क-वितर्क की ज़रूरत न रहेगी। जब तक इस सच्चाई की समझ नहीं आती तभी तक आदमी शब्दों के फेर में अटका रहता है।

परमसंत डॉ.श्रीकृष्ण लालाजी महाराज के अनमोल वचन

ईश्वर प्राप्ति का सच्चा और सीधा रास्ता

- हर समय यह ख़्याल रखो कि ईश्वर हर पल तुम्हारे साथ है और वह तुम्हारा सच्चा बाप है। प्यार से उसका पवित्र नाम लेते रहो।

***

- जिस हालत में भी उसने रखा है, चाहे वह बुरी है या अच्छी, उसमें खुश रहो। दुख और सुख की दुनिया से ऊँचे उठो। जब तक जीवन है, दुख और सुख तो आते ही रहेंगे। उनका आना ही ज़रूरी है लेकिन अपने मन को ऊँचे उठाओ और जो सेवा या कर्तव्य ईश्वर ने सुपुर्द किया है, उसे ईमानदारी और सच्चे दिल से पूरा करो। हर समय ख़्याल रखो कि यह दुनियाँ ईश्वर की है। हम सब ईश्वर के हैं। जो काम हो रहा है और हम कर रहे हैं, ईश्वर के लिए कर रहे हैं। हम वहीं से आये हैं, उसी की दुनियाँ में रह रहे हैं और वहीं जाना है।

***

- अपने ख़्यालों को हमेशा शुद्ध करते जाओ। ख़्यालों पर काबू पाने की कोशिश करो। बुद्धि को सांसारिक विचारों से हटाकर सन्तों की वाणी, शास्त्रों के उपदेश और परमात्मा के नाम में लगाओ। मन की इच्छाओं पर विजय पाओ और मन को गुरु के ध्यान में लगाओ। इन्द्रियों का आचार ठीक करो। कोशिश करो कि इन्द्रियाँ सांसारिक विष्ठा रूपी पदार्थों की बजाय हर जगह ईश्वर को देखें। यही रहनी सहनी ठीक करना है।

***

- जब-जब मौका मिले सन्तों गुरुजनों की सेवा करो। उनको प्रसन्न करो, उनके उपदेशों को हित-चित से सुनो और उन पर अमल करने की कोशिश करो। हमेशा पूरी कामयाबी होगी। कभी निराशा नहीं होगी। यही सच्चा, सीधा और सहज रास्ता ईश्वर प्राप्ति का है।

***

- दुनियाँ का एक-एक ज़र्रा (कण), मन की एक-एक ख़्वाहिश (इच्छा) हमारा हर वक्त विरोध करते रहते हैं कि हमारा अपने असल (ईश्वर) से मिलन न हो।

***

- सन्त वह है जिसने अपनी आत्मा को मन और माया के प्रपंच से आजाद करा करके परम अनामी पुरुष (परमेश्वर) में लय कर दिया हो।

***

- 'काल' मन का मालिक है। ऐसा ख़्याल मन में डालता है कि रास्ते से हटा देता है। विश्वास ढिलमिल होने लगता है। इससे बचाव की एक ही तरकीब है और वह हम सबको याद रखनी चाहिए। जब ऐसा विघ्न आवे तो फौरन गुरु के सामने आ जायें। और अगर अपनी बुद्धि के चक्कर में पड़ गया तो गया।

***

- जब भी मन पर काल का (माया) प्रभाव हो, ख़्यालात ख़राब हों, हालत डिगमिग हो, तो गुरु के सामने ज़रूर जाता रहे। अगर ऐसा न हो सके तो खत में अपनी हालत लिख कर भेज दे। अपनी बुद्धि पर भरोसा न करे वर्ना धोखा खायेगा।

***

- सब पात्रता और अधिकार पर निर्भर है। गुरु और ईश्वर की कृपा हरेक पर हर समय हो रही है लेकिन जिसने जितने कपड़े मन और माया के पहने हुए हैं, उसे उतनी ही कृपा कम अनुभव होती है। जिसने जितना अपने आप को बना लिया है, यानी अपने को मोह माया से अलहदा कर रखा है वह उतनी कृपा ज़्यादा महसूस करता है। इसलिए अपने पात्र को बनाने की ज़रूरत है। अपनी आत्मा पर से मन और माया के पर्दे हटाने की ज़रूरत है।
- सांसारिक इच्छाओं से अपने मन को साफ़ करते रहना अपने पात्र को बनाना है और जितना यह साफ हो जाता है उतनी ही उसकी कृपा अनुभव होती

है। इसलिए हमारा कर्तव्य यही है कि अपने मन को हर समय दुनियाँ की इच्छाओं से आहिस्ता–आहिस्ता साफ़ करते रहें।

***

- बग़ैर अनुराग के कोई वैराग सही नहीं होता।

***

- असली सत्संग यह है कि गुरु की वाणी को याद रखे और उनके आदेशों पर चलने का प्रयत्न करे।

***

- सारी विद्याओं, कलाओं आदि का सिद्धान्त, यह है कि मनुष्य के मस्तिष्क में यह बात बैठ जाय कि मैं क्या हूँ, मेरी असलियत क्या है, और मुझ में क्या गुण हैं? लोग हर वस्तु की कद़र और क़ीमत जानते हैं लेकिन अपने आपको नहीं पहिचानते।

***

- प्रेम में दूरी नहीं है। अगर सच्चा प्रेम है तो प्रियतम और प्रेमी हर वक्त साथ रहते हैं।

इबादत वो है जिसमें जरूरतों का जिक्र न हो,
सिर्फ उसकी रहमतों का शुक्र हो।

खोजना है तो सिर्फ जिंदगी खोजो,
मौत तो वैसे ही एक दिन खोज लेगी।

सवाल यह नहीं कि मृत्यु के बाद जीवन मौजूद है या नहीं,
असली सवाल यह है कि आप मौत से पहले जीवित हैं या नहीं।

–ओशो

प्रवचन परमसंत डॉ. करतार सिंहजी साहब

मृत्यु का डर और मोक्ष

संतजनों का कहना है कि कोई क्षण भी ईश्वर की याद से ग़ाफ़िल न रहो। दुनियाँ के काम करते हुए भी उसका स्मरण निरन्तर करते रहो। परन्तु यह असम्भव सा प्रतीत होता है क्योंकि संसार में व्यवहार करते समय ध्यान ईश्वर की तरफ से हट कर अनायास ही सांसारिक बातों में चला जाता है और उसी में विलीन हो जाता है, ईश्वर की तरफ तो मुड़ता ही नहीं। मन को या अपनी विचारधारा को बिना ईश्वर की तरफ मोड़े परमार्थ का रास्ता चलना बहुत कठिन है। गुरुदेव (महात्मा श्रीकृष्ण लाल जी महाराज) कहा करते थे कि अगर ईश्वर की याद कायम नहीं रहती है तो मौत को हमेशा सामने रखो कि न जाने किस वक्त आ जाय। यह एक ऐसा साधन है कि मौत के डर से ईश्वर का ख़्याल आता ही है। निरन्तर मौत का ख़्याल सामने रखने से भी ईश्वर के चिन्तन में बड़ी सहायता मिलती है। एक दिन मैं अपने एक डॉक्टर मित्र से हॉस्पिटल में ई.सी.जी. कराने गया और बातों-बातों में मैंने उनसे कहा कि डॉक्टर साहब! मुझे मरने से डर नहीं लगता है और न मुझे इस बात की चिन्ता है कि मेरी मृत्यु हो जायेगी क्योंकि यह ईश्वर का नियम है कि जो आया है वह जायेगा ज़रूर। उन्होंने उत्तर दिया कि डॉक्टर साहब! मौत का इतना डर नहीं होता जितना मरने से पहले होने वाले शारीरिक कष्ट का डर होता है। उनकी बात ठीक थी। शारीरिक कष्ट का अनुभव तभी होता है जब हमारी सुरत या (attention) शरीर की तरफ होती है। मृत्यु के समय कष्ट न हो ऐसा तो हो ही नहीं सकता जब तक कि जिस रास्ते होकर आत्मा शरीर को छोड़ती है (जान निकलती है) उस रास्ते चलने का पहले से ही अभ्यास न हो। इसका सरल रास्ता संतों ने ही बताया है और उसी को 'सुरत-शब्द-योग' कहते हैं। इसका साधारण भाषा में अभिप्राय है कि आत्मा की धार ईश्वर के चरणों में से उतर कर मनुष्य के ब्रह्म-रंध्र (Medulla Oblongata) में उतरी और वहाँ से शरीर में भिन्न-भिन्न स्थानों पर चक्र (nervous centres) बनाती हुई पैरों तक फैल गई। उसी से यह शरीर जीवित और संचालित है। जब मनुष्य

की मौत होती है तो आत्मा की यही धार नीचे से खिंच कर ऊपर की ओर वापस जाती है और शरीर से बाहर निकल जाने की कोशिश करती है।

साधारण व्यक्ति सुरत-शब्द-योग का अभ्यास नहीं जानते इसलिए आत्मा की वापसी में मौत के वक्त उन्हें बहुत कष्ट होता है। जो सत्संगी हैं और सुरत-शब्द-योग का अभ्यास कर रहे हैं यानी आत्मा की उलट धार कर रहे हैं और जिसने जितने चक्र पार कर लिए हैं उसको मृत्यु के समय उतना ही शारीरिक कष्ट कम अनुभव होता है। संतजन जो उलट धार कर चुके हैं और नित्य उस रास्ते सब चक्रों में से होकर अपनी सुरत को चढ़ाते हुए ऊपर के स्थान पर (सचखंड में) बैठक बना ली है, जहाँ से आदि में आत्मा शरीर में उतरी, उन्हें मृत्यु के समय कोई कष्ट नहीं होता, प्रसन्नता से जाते हैं। इसलिए यदि मृत्यु के पहले होने वाले कष्ट से बचना है और आसानी से दुनियाँ से निकल कर अपनी आत्मा को उसके मूल परमात्मा में मिलाना है तो सुरत-शब्द-योग का अभ्यास करना चाहिये।

यह अभ्यास अति सरल और सुगम है। इसे करने के लिए कोई बन्धन नहीं हैं, कोई भी व्यक्ति कर सकता है। सब समय में, सब परिस्थितिओं में इस अभ्यास को किया जा सकता है। इसकी एक मूल बात यह है कि सुरत-शब्द-योग को जानने वाला वक्त का पूरा सदगुरु होना चाहिये जिसकी शरण में जाकर उसमें प्रीति लगा कर सम्पूर्ण श्रद्धा के साथ उससे इस अभ्यास की विधि सीखें। उसके वचनों पर हित-चित्त लगायें और उसके उपदेशों का पूरा-पूरा पालन करें। अपने मन को बीच में न लायें यानी मनमत न बन कर उसके मत में चले। गुरु के बताए मार्ग पर चलता चला जाये रुक कर बैठे नहीं। बाधाएँ आती हैं, माया रुकावटें पैदा करती है लेकिन एक गुरु का आश्रय ही उनसे निकाल कर अपने लक्ष्य तक पहुँचा देता है और ईश्वर से मिला देता है। मरते समय शरीर में कष्ट भले ही हो लेकिन उसे इसका अनुभव नहीं होता क्योंकि उसकी सुरत परमात्मा में लगी होती है। वह प्रसन्नता के साथ जाता है, मोक्ष-पुरुषों की आत्मायें उसे लेने आती हैं और वह जीवन-मरण के चक्र से छूट जाता है।

गुरुदेव सबका कल्याण करें।

पूज्य गुरुदेव डा. शक्ति कुमार सक्सेना जी के जीवन से सम्बन्धित कुछ महत्वपूर्ण प्रसंग

पूज्य गुरुदेव डॉ. शक्ति कुमार जी के जीवन से जुड़े कुछ महत्वपूर्ण प्रसंग जो रामाश्रम सत्संग, गाजियाबाद के विभिन्न प्रकाशनों से लिए गए हैं, यहाँ प्रस्तुत किये जा रहे हैं, जो यह दर्शाते हैं कि उनके जीवन में गुरु-कृपा, जो उन्होंने अपने गुरु के प्रति श्रद्धा और समर्पण से अर्जित की थी, का कितना महत्वपूर्ण योगदान रहा।

गुरु कृपा से मेडिकल कॉलेज में प्रवेश

पूज्य शक्ति कुमार जी ने मौलाना आजाद मेडिकल कॉलेज, दिल्ली से एम.बी.बी. एस. उपाधि प्राप्त की थी। इस प्रतिष्ठित कॉलेज में प्रवेश उन्हें महात्मा डॉ. श्रीकृष्ण लाल जी के आशीर्वाद से प्राप्त हुआ था। इस प्रसंग का उल्लेख पूज्य शक्ति भाई साहब ने अपने एक लेख - ''उन दयानिधान की दया क्या-क्या जलवा नहीं दिखा सकती'' में इन शब्दों में किया है। -

''मेरे पिता जी (पू. श्री कृष्णा सहाय जी) गुरु महाराज की सेवा में जाया करते थे। इसी नाते सन् 1966 में मुझे भी उनकी शरण में जाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। उन दिनों मैं डॉक्टरी पढ़ने का इच्छुक था। कई मेडिकल कॉलिजों में प्रवेश पाने के लिए प्रार्थना पत्र दिए, वहाँ से साक्षात्कार के लिए पत्र भी आये परन्तु किसी न किसी बहाने से मुझे प्रवेश नहीं मिला। मेरे पिताजी भी परेशान थे और जब उन्होंने यह परिस्थिति देखी तो बोले कि अब अगर इस दुनियाँ में कोई मदद कर सकते हैं तो वे हैं केवल हमारे गुरु महाराज। मुझसे कहने लगे कि कल तुम मेरे साथ सिकन्दराबाद चलो। उनकी कृपा से शायद कुछ काम बन जाये।

अगले दिन सिकन्दराबाद पहुँचने पर पहले तो गुरुदेव ने कुछ देर पूजा पर बिठाया, जैसा कि उनका सबके साथ नियम था, फिर पिताजी से घर के सब लोगों की कुशल पूछी, किन्तु असल बात यानी मेरे मेडिकल कॉलेज के प्रवेश के बारे में न तो गुरुदेव ने ही पूछा और न मेरे पिताजी ने ही कुछ निवेदन किया। शाम को पिताजी ने दिल्ली

वापिस जाने की आज्ञा माँगी और चलते समय जब चरण छूने लगे तो गुरुदेव पिताजी से बोले – ''बाबू साहब, गुरु के पास जो भी शिष्य सच्ची श्रद्धा से जो भी इच्छा लेकर आता है वह जरूर पूरी होती है।'' उस समय मैं उनकी इस बात का मतलब नहीं समझा।

गुरु महाराज का द्वार छोड़कर बाहर निकलते ही मेरे पिताजी ने कहा – ''अब तुम्हारा दाखिला हो गया, गुरु महाराज ने आशीर्वाद दे दिया।'' अगले दिन मौलाना आजाद मेडिकल कॉलिज, दिल्ली से (जिस कॉलिज में प्रवेश की बात मैं कभी सोच भी नहीं सकता था) मेरे लिए प्रवेश पत्र आया और मुझे डॉक्टरी में प्रवेश मिल गया। मेडिकल कॉलेज की पढ़ाई के अन्तिम चरण में बंगलादेश की लड़ाई शुरू हो गयी और अपने कॉलिज में से मुझे वहाँ सेवा कार्य के लिए भेज दिया गया। इस लड़ाई के बाद मुझे सेना में मेडिकल कोर में कमीशन मिल गया।''

परम पूज्य गुरु महाराज की कृपा से पूज्य शक्ति जी को जीवन दान

पूज्य शक्ति भाई साहब के जीवन की एक घटना सन् 1978 की है जब उन्हें परम पूज्य महात्मा जी की कृपा से जीवन दान मिला। इस प्रसंग का उल्लेख स्वयं पूज्य शक्ति जी ने अपने एक लेख में इन शब्दों में किया है।

''घटना सन 1978 की है। मैं तब सेना में मेजर के पद पर था। हमारी यूनिट मध्य प्रदेश में रीवाँ के निकट अभ्यास कर रही थी। एक रात को हमारी यूनिट एक स्थान से दूसरे स्थान को जा रही थी। हमें रात ही रात में एक स्थान से दूसरे स्थान पर, जो काफी दूर था, पहुँचना था। हमारी सारी यूनिट एक convoy (काफ़िला) के रूप में सेना की मोटरों में सवार होकर जा रही थी। मेरी गाड़ी और गाड़ियों से अलग थी जिसमें ड्राइवर की साथ वाली सीट पर मैं बैठा हुआ था। रात काफी बीत चुकी थी और मैं सीट पर बैठा ही बैठा सो गया।

अकस्मात ही मुझे गुरुदेव के स्वर में आवाज सुनाई दी 'हे राम' और मैं एकदम चौंक कर उठा कि इस समय और इस एकान्त जगह में गुरु महाराज की आवाज कैसे? देखा तो गाड़ी का चालक भी गहरी नींद में स्टीयरिंग (वह पहिया जिसे पकड़

कर ड्राइवर गाड़ी चलाता है) पर सिर रख कर सो गया था। गाड़ी सड़क से नीचे उतर चुकी थी, सामने के नाले में गिरने वाली थी। मैंने एकदम चालक को हिलाकर जगाया और गाड़ी रुकवाई। उस समय मन ही मन में गुरुदेव की याद करके रोने लगा कि सोते में भी जबकि मैं उनकी याद से गाफ़िल था उन्होंने ऐसी अपार कृपा की, मेरी और गाड़ी में सवार सैनिकों की जान बचायी और एक बड़ा भारी संकट टाल दिया। सचमुच गुरु सदा अपने शिष्य की रक्षा करता है और हर समय परछाई की तरह चारों ओर छाया रहता है।''

परम पूज्य गुरुदेव डॉ. करतार सिंह जी द्वारा अपने उत्तराधिकारी की घोषणा

परम पूज्य गुरुदेव डॉ. करतार सिंह जी रामाश्रम सत्संग, गाज़ियाबाद के आचार्य व अध्यक्ष थे। पूज्य सरदारजी महाराज ने ब्रह्मलीन महात्मा डॉ. श्रीकृष्ण लाल जी महाराज की पवित्र जन्मशती के अवसर पर दशहरा भंडारे, गाज़ियाबाद में दिनांक 13 अक्टूबर, 1994 को सम्पन्न कार्यक्रम में पूज्य डॉ. शक्ति कुमार जी को अपना उत्तराधिकारी घोषित किया। आपको इजाजत ताअम्मा (सम्पूर्ण गुरु पदवी) पूर्व में ही प्रदान की जा चुकी थी।

इस पुनीत अवसर का उल्लेख एक वरिष्ठ सत्संगी बहिन ने जन्मशती के अवसर पर प्रकाशित स्मारिका 'भावांजलि' में इस प्रकार किया है-

''गुरु वंदना आदि के उपरान्त एक अभूतपूर्व दृश्य देखने का सौभाग्य समस्त सत्संग परिवार को मिला। पूज्य भाई साहब (गुरुदेव डॉ. करतारसिंह जी) ने एक थाली में रोली-चावल, पुष्पहार व मिष्ठान मंगवाया और डॉ. शक्ति कुमार को भंडारा-किचन से बुलवाया। किसी को कुछ भी भान न था कि यह क्या हो रहा है। तभी मंच पर शक्ति भाई साहब के बैठने के पश्चात् पूज्य सरदारजी भाई साहब ने स्वयं उठकर डॉ. शक्ति कुमार जी को तिलक लगाया, गले में माला पहनाई, प्रसाद दिया और नमन किया। फिर गुरुदेव के चित्र का चरण स्पर्श करके उपस्थित सत्संग समुदाय के सामने घोषणा कर दी कि - ''मेरे बाद डॉ. शक्ति मेरे काम को संपन्न करेंगे।''

यह दृश्य अत्यंत हृदय-स्पर्शी और करुण था। सभी उपस्थित भाई-बहन रो उठे थे। सभी के हृदय में यही आकांक्षा थी कि हमारे परम पूज्य और परम प्रिय सरदार

जी भाई साहब सदा ही गुरुपद को सुशोभित करते हुए आध्यात्म की पीयूष वर्षा करते रहें। डॉ. शक्ति जी तो अत्यंत विह्वल थे। आदरणीय सरदारनी भाभी जी ने भी शक्ति जी को प्रसाद खिलाया तथा एक आशीर्वचन भी गाया – ''पूता माता की आसीस .....''

15 जून, 2012 को परमपूज्य डा. करतार सिंह जी महाराज अपनी जीवन लीला पूर्ण कर ब्रह्मलीन हो गए। उनके ब्रह्मलीन होने के पश्चात् उपरोक्त व्यवस्था के अनुसार अपने सत्संग के आचार्य–अध्यक्ष का गुरुतर दायित्व ग्रहण किया तथा जीवन–पर्यन्त तक इस पद पर आसीन रहकर अपने पूर्वज गुरुजनों के मिशन को कुशलता पूर्वक आगे बढ़ाते रहे।

कबीर वाणी

मेरे साधो भाई, सब जग भुल्या पाया ।।टेक।।
इसी भूल में ब्रह्मा भूला जिसने वेद पुराण सरसाया।

वेद पढ़कर ये पंडित भूले जिन्हें सार शब्द ना पाया।
इसी भूल में विष्णु भूला जिसने वैष्णो धर्म चलाया।

कर्म काण्ड में बांध जीवों को चौरासी भरमाया।
मेरे साधो भाई, सब जग भुल्या पाया।।टेक।।

इसी भूल में शंकर भूला जिसने भिक्षुक पंथ चलाया।
सर पर जटा हाथ में खप्पर घर–घर अलख जगाया।

इसी भूल में भूला मछंदर, जिसने सिंघल द्वीप बसाया।
विषय वासना के बस होकर अपना योग नसाया।

कहे कबीर सूनो भाई साधो हम युग–युग जीत चिताया।
जिसने जाना मर्म भूल का, वो फिर वापिस गर्भ न आया।

श्रद्धांजली

रामाश्रम सत्संग-परिवार अपने आराध्य आचार्य परमपूज्य डॉ. शक्तिकुमार जी की पुण्यात्मा जो दिनाँक 17 अप्रैल, 2020 को अपने भौतिक शरीर के आवरण से मुक्त होकर परमपिता परमात्मा के चरणों में लीन हो गयी को अपनी अश्रुपूरित श्रद्धांजली अर्पित करता है। हम प्रभु से प्रार्थना करते हैं कि आपकी आत्मा को अपने चरणों में स्थायी वास दें तथा शोक-संतप्त परिवार को इस आघात को सहन करने की शक्ति प्रदान करें।

पूज्य शक्ति भाई साहब का जन्म दिनांक 5 अक्टूबर, 1948 को हुआ था। आपके पूज्य पिता श्री के.बी. सक्सेना जी तथा पूज्य माता जी दोनों ही पूज्य महात्मा डॉ. श्रीकृष्ण लाल जी महाराज से दीक्षित थे तथा गुरु-भक्त प्रभु-प्रेमी थे। इन दोनों की छत्र-छाया में रहते हुए ही आपके हृदय में सत्संग के प्रति अनुराग उत्पन्न हुआ तथा आपने अपने पिता जी के साथ महात्मा जी की सेवा में जाना प्रारम्भ किया। आप सर्वप्रथम 1966 में अपने पिताश्री के साथ महात्मा जी की सेवा में उपस्थित हुए। आपने बाद में पूज्य महात्मा जी से ही दीक्षा प्राप्त की। पूज्य महात्मा जी का आप पर विशेष स्नेह और कृपा थी। पूज्य गुरु महाराज की कृपा से ही आपको मेडिकल कॉलेज में प्रवेश प्राप्त हुआ तथा एक अवसर पर संभावित दुर्घटना से आपको जीवन दान मिला। इन दोनों ही प्रसंगों का उल्लेख पूज्य शक्ति भाई साहब ने स्वयं अपने लेखों में किया है। आपका विवाह 8 फरवरी 1973 को वरिष्ठ सत्संगी आदरणीय श्री महेश चन्द्र जी की सुपुत्री सीता देवी जी से संपन्न हुआ।

पूज्य महात्मा जी 18 मई 1970 को देह त्याग कर जीवन मुक्त हो गए तथा पूज्य शक्ति भाई साहब को अपने उत्तराधिकारी परमसन्त डा. करतारसिंह जी साहब की सेवा में सौंप गए। पूज्य सरदारजी महाराज ने अपने जीवन

काल में ही आपको अपना उत्तराधिकारी घोषित किया। 15 जून 2012 को पूज्य सरदारजी भाई साहब के ब्रह्मलीन हो जाने पर आपने उनके उत्तराधिकारी के रूप में रामाश्रम सत्संग के आचार्य–अध्यक्ष की बागडोर संभाली।

आध्यात्मिक आभा से विभूषित अत्यंत सरल, सहज और प्रेमपूर्ण मुस्कान से देदीप्यमान आपका व्यक्तित्व हमारे मानस पटल पर सदैव अंकित रहेगा। रामाश्रम सत्संग के आचार्य–अध्यक्ष के रूप में एक छोटे से कार्यकाल में अपने अथक परिश्रम से आपने सत्संग की जो सेवा की वह सदैव स्मरणीय रहेगी। देह–बंधन से मुक्त होकर अपनी कृपा–प्रसादी से आप सत्संग परिवार को उपकृत करते रहेंगे– ऐसी हमारी पुण्यात्मा से विनम्र प्रार्थना है तथा विश्वास भी।

परमपिता परमेश्वर एवं गुरु–चरणों में लीन आपकी पुण्यात्मा को शत–शत नमन। ॐ शांति।

–प्रो. आदर्श किशोर सक्सेना

हज़ार दर्द
शब–ए–आरज़ू
की राह में हैं
कोई ठिकाना बताओ
कि काफ़िला उतरे
करीब और भी आओ
कि शौक–ए–दीद मिटे
शराब और पिलाओ
कि कुछ नशा उतरे

– फ़ैज़ अहमद फ़ैज़

बुल्ले शाह बाबा ने अपने पीर से कहा, "मुझे खुदा से मिला दो"।
पीर शाह इनायत ने जबाब दिया "पहले खुद को भुला दो"।।

अगर आप रगड़ से चिढ़ते हैं तो पालिश कैसे हो पाओगे ?

कल मैं चालाक था तो दुनिया बदलना चाहता था, आज मैं बुद्धिमान हूँ, इसलिए मैं अपने आप को बदल रहा हूँ।

–रूमी

प्राचीन मुस्लिम संतों के जीवन चरित्र

अबु हाफ़िज़ खुरासानी

तपस्वी अबु हाफ़िज़ भजन, साधन, उत्साह और सरलता में सबसे बढ़े चढ़े थे। वे सत्यपरायण, प्रेमोन्मत्त और आनंदी स्वभाव के थे। वे अबु उस्मान हमरी के शिष्य थे। तपस्वी शाहशुजा किरसान से उनके दर्शन करने के लिए बगदाद तक गये थे। अबु हाफ़िज़ खुरासान के निवासी थे।

पहले उनका चरित्र बहुत ही खराब था। एक बार एक जवान स्त्री पर मोहित होकर उन्होंने अनेक उपायों से उसे वश में करने की कोशिश की पर सफल नहीं हुए वे उस स्त्री के पीछे पागल से हो गये। किसी ने उन्हें सलाह दी कि नेशापुर में एक यहूदी जादूगर है जो किसी जादू टोने से उनका मतलब पूरा कर देगा। अबु हाफ़िज़ ने उसके पास जाकर अपना पूरा हाल सुनाया। यहूदी ने उन्हें समझाया कि अगर वे चालीस दिन तक कोई भी धर्म का काम नहीं करेंगे, उपवास नहीं करेंगे, मन में किसी प्रकार का अच्छा विचार नहीं आने देंगे तो अपने जादू टोने से वह उस युवती को वश में कर देगा।

यहूदी के कहे मुताबिक चालीस दिन बिताकर वे उसके पास गये। यहूदी ने जादू टोना शुरू किया पर उसका कोई नतीजा नहीं निकला। यह देखकर यहूदी ने कहा कि चालीस दिन में उसने जरूर कोई न कोई भला काम किया है या भलाई की कोई बात मन में उठी है और उसी से उसके जादू टोने का असर नहीं हो रहा है।

अबु हाफ़िज़ ने बतलाया कि उन चालीस दिनों में उन्होंने कोई भला काम नहीं किया। हाँ, एक दिन रास्ता चलते उन्हें एक पत्थर की ठोकर लगी थी। किसी दूसरे को चोट न लग जाये इस मतलब से उन्होंने उसे उठाकर एक ओर फेंक दिया था।

यहूदी ने उन्हें समझाया कि यही उसकी असफलता का कारण है। चालीस दिन तक ईश्वर की हुक्म उदूली करते रहने पर भी उसने कितनी मेहरबानी की है। एक छोटे से भले काम के कारण उसने उन्हें इतने बड़े पाप से बचा लिया है। उस प्रभु का विरोध और नहीं करना चाहिये।

यहूदी की इन बातों से अबु हाफ़िज़ के मन में पश्चाताप की ज्वाला धधकने लगी। आगे से कोई बुरा काम न करने का पक्का इरादा करके वे भलाई के रास्ते पर

चलने लगे। वे लोहार थे। अपने काम में उन्हें तकरीबन तीन रुपये रोज की आमदनी होती थी, जिसे वे दीन दुखियों को बांट देते अथवा बिना मांगे किसी दीन दुखी के घर में रुपया दो रुपया फेंक आते। जिससे धन पाने वाले की किसी प्रकार बेइज़्ज़ती न होने पाये। रोज शाम को नमाज के बाद वे थोड़ा खाना खाते और सादगी से जीवन बिताते।

एक दिन वे लोहा पीट रहे थे। भाव भक्ति से भजन गाता हुआ एक अंधा उनके पास से गुजरा। अबु हाफ़िज़ उसका भजन सुनकर इतने मस्त हुए कि वे अपनी और अपने काम की सुधि ही भूल गये। लाल लोहे को हाथ से पकड़कर उन्होंने हथौड़े के नीचे रख दिया। साथियों ने यह देखकर उन्हें चेत कराया तो उनका हाथ बुरी तरह से जल चुका था।

इस घटना के बाद से उन्होंने अपनी दुकान उठा दी और वे साधना में लग गये। निर्जन स्थान में रहकर वे ध्यान में मग्न रहते। आखिरी जीवन में वे पागल से हो गये थे। उनके पागलपन में भी मिठास भरी थी।

एक दिन उस्मान हमरी उनसे मिलने गये। वहाँ कुछ दाख रखी थी। एक दाना उठाकर उस्मान ने मुंह में रख लिया। यह देखकर अबु हाफ़िज़ ने कहा– ''अरे नादान! मेरी दाख क्यों खाता है?''

उन्होंने कहा– ''मैं यह देखना चाहता था कि आपको मुझ पर कितना भरोसा है? जो चीज आपकी है वह आप उदारता से मुझे दे सकते हैं या नहीं?''

अबु हाफ़िज़– ''अरे मूर्ख! मेरे मन का मैं ही भरोसा नहीं कर पाता हूँ तो तुमने कैसे इसका भरोसा कर लिया? मैं तो वर्षों से चाहता हूँ कि इस मन के भाव जान पाऊँ पर अभी तक न जान सका। जिस मन को उसका भावुक ही नहीं जान पाया उसे तुम बाहर ही से कैसे जान गये?''

एक दिन उनसे उस्मान ने कहा– ''सभा में उपदेश देने के लिये मैं उत्साहित हो रहा हूँ।''

अबु हाफ़िज़ ने पूछा– ''ये उत्साह तुम्हें कैसे हुआ?''

''लोगों पर दया उपजने के कारण।''

''तुम्हारी दया की हद कितनी है?''

''अपार। ईश्वर अगर मुझे नर्क में भेज दे और उसके बदले मैं मानवता का

कल्याण करूँ तो मैं उसे खुशी-खुशी सह लूंगा।''

''बहुत ठीक। जाओ आज उपदेश दो।''

अबु उस्मान सभा में उपदेश देने गये। अबु हाफ़िज़ भी उनके पीछे चले। उपदेश हो चुकने पर एक गरीब ने सभा में आकर कपड़े मांगे। उस्मान ने तुरंत अपना कपड़ा उतार कर उसे दे दिया। यह देखते ही अबु हाफ़िज़ ने खड़े होकर कहा- ''बस, उस्मान नीचे उतरो - झूठ ही कह रहे थे कि तुममें दया है।''

''यह कैसे?''

''तुमने अभिमान के साथ कहा था कि लोगों के लिए तुम्हारे मन में दया है। इस गरीब को अपने आप तुरंत कपड़े देकर इतने आदमियों को दान करने के मौके से वंचित किया है। यह तो उनके प्रति दया भाव नहीं है।''

अबु हाफ़िज़ एक बार सबली शेख के यहाँ अतिथि हुए। शेख ने उनका बहुत आदर सत्कार किया, भांति-भांति के खान पान से उनका आतिथ्य किया। लौटते समय उन्होंने शेख से कहा- नशेपुर आओ तो मेरे यहाँ ठहरना। तुम्हें बतलाऊँगा कि आतिथ्य सत्कार कैसे होना चाहिये। अतिथि के घर आने पर घर के मालिक को वह भार स्वरूप नहीं मालूम होना चहिये और उसके चले जाने पर बोझ हल्का हुआ सोचकर खुशी नहीं होनी चाहिये।

कुछ समय बाद सबली एक दिन नशेपुर जाकर अबु हाफ़िज़ के मेहमान हुए। उस दिन उनके यहाँ इकतालीस मेहमान थे, उन्होंने उतने ही दिये जलाये। सबली ने उनसे ऐसा करने का कारण पूछा।

उन्होंने उत्तर दिया- ''सबली, मैंने यह तकलीफ तुम्हारे लिये नहीं उठाई है। मेहमान ईश्वर का भेजा हुआ आता है। आज उसने जितने अतिथि भेजे हैं उतनी ही अधिक कृतज्ञता दिखाने के लिए मैंने ये दिये जलाये हैं।''

एक दिन तपस्वी अबु हाफ़िज़ के पड़ोस में शास्त्र वचन हो रहा था। सभी पड़ोसी इकठ्ठे हुए थे पर हाफ़िज़ नहीं गये। उन्हें खास बुलावा आया तो भी वे नहीं गये। पड़ोसी खुद गया तो उन्होंने कहा- ''मैं तीस वर्षों से यही कोशिश कर रहा हूँ कि शास्त्र के एक भी वचन का आचरण कर सकूँ। अभी तक मैं वैसा नहीं कर सका तो भी और शास्त्र वचन सुनकर क्या करुँगा।''

पड़ोसी ने पूछा कि ऐसा कौन सा वचन है कि जिस पर उन जैसा तपस्वी भी

आचरण नहीं कर सका। उन्होंने बताया कि जिस बात से आत्मा अपवित्र हो उसका त्याग।

अबु हाफ़िज़ बगदाद की यात्रा के बाद एक जंगल से होकर गुजर रहे थे। सोलह दिन के बाद उन्हें एक जलाशय मिला। उसके किनारे बैठकर वे सोचने लगे कि बुद्धि बड़ी या विश्वास? इतने में वहाँ अबु तोराब नखशखी आ पहुंचे। उन्होंने मन की दुविधा बताकर कहा कि अगर बुद्धि बड़ी हो तो यहाँ भली भांति पानी पीकर और मशक भरकर आगे बढ़ूँ और अगर विश्वास बड़ा हो तो आगे की चिंता उसी प्रभु पर छोड़ दूँ।

अबु हाफ़िज़ ने कहा था कि, तीस वर्ष तक उन्हें ऐसा लगता था कि ईश्वर रात दिन क्रोध भरी आंखों से उनकी ओर देख रहा है। ऐसी अवस्था में मुझे कितना भय और संताप होता था ये मेरा मन ही जानता है।

उनके मन में जब कभी क्रोध आता तो वे प्रभु स्मरण करने लगते। इससे उनका क्रोध शांत हो जाता। ऐसा हो जाने के बाद ही वे किसी दूसरे काम में लगते।

महमन नाम का एक आदमी उनके साथ बाईस वर्ष तक रहा था। उसका कहना था कि उसने कभी उन्हें उदासीन नहीं देखा। ज्यों ही वे ईश्वर स्मरण करते, उनका भाव बदल जाता और सम्मान के साथ वे ईश्वर को स्मरण करते। मरते समय उन्होंने कहा था कि अपने अपराधों व अपनी अयोग्यताओं के कारण पूरी तरह से सावधान होकर रहना चाहिये।

उपदेश वचन

- जो मनुष्य विपत्ति में भी अपने ऊपर ईश्वर को देख सकता है वह कभी मृत्यु के अधीन नहीं हो सकता।
- तलवार हाथ में लेकर निर्भय नहीं होना, निर्भय होने के लिए तो प्रभु दर्शन पाने की कोशिश करना।
- ईश्वर की सेवा से शरीर में और श्रद्धा से प्राणों में ज्योति प्रकट होती है।
- प्रभु के पास पहुंचने के अनेक मार्ग और द्वार हैं। यदि तुम उनमें से एक को भी पकड़ लोगे तो तुम्हारे लिए वो और दूसरे सभी मार्ग व द्वार खुल जायेंगे।

- जो कुछ भी हमारा है उसका त्याग करो और वह जैसी आज्ञा दे उसका पालन करो।
- तुम ईश्वर के पास किस मन से जाओगे? एक दीन-हीन तो फटे पुराने कपड़े पहन कर और भीख मांगता हुआ ही धनी के सामने जायेगा।
- जिसे विनय और प्रणाम करने में आनंद आता है वही सच्चा सन्त समागम कर सकता है।
- जो पदार्थों में ईश्वर का दर्शन करता है, पर ईश्वर में पदार्थों को नहीं देखता वह आंखें होते हुए भी अंधा है।
- ईश्वर प्रेमी का लक्षण क्या? शरीर रखने की अपेक्षा उसे छोड़ने में अधिक रुचि और आनंद मानना।
- ऐहिक और पारलौकिक कार्यों में अपने लाभ की अपेक्षा दूसरों के लाभ की ओर ज्यादा ख्याल रखना ही सच्चा स्वार्थ त्याग है।
- जो मनुष्य अन्न पानी के बिना दुखी है उसकी चाकरी में ही स्वार्थ मानना महत्व का काम है, वही तुम्हें ईश्वर की ओर ले जायेगा।
- जो आत्म निरीक्षण न करके स्वयं को निर्दोष मानता रहता है उससे बड़ा अहंकारी दूसरा कोई नहीं।
- ईश्वर का भय मन का दीपक है। इस दीपक के प्रकाश में मनुष्य अपने गुण दोष भली प्रकार देख सकता है।
- दूसरों से लेने की अपेक्षा देने में जिसे अधिक सुख मालूम न हो तो वह सच्चा फ़कीर नहीं हो सकता।
- सांसारिक पदार्थों के मिलने पर भी जो उनका त्याग करता है वह श्रेष्ठ है, जो लेता है और देता भी है वह मध्यम है, पर जो सिर्फ लेता ही है वह तो अधम है।

PLAYING WORLDLY GAME UNDER THE DIVINE CAPTAIN

The Ideal of Human Conduct in the Geeta

In his brief but beautiful and sublime discourse given on the battle-field of Kurukshetra to Arjuna, the most illustrious hero of his age, just before the commencement of the most horrible war of Mahabharata, Shri Krishna in his characteristic Divine mood presented to the human race a philosophy of human conduct, which was perfectly in tune with the philosophy of the Divine Leela as illustrated in his own life.

The discourse has been appropriately described by the greatest thought-leaders of Bharatavarsha as the Divine song, Shrimad Bhagavad Geeta. It is really an unparalleled philosophical song. It is also spoken of as Upanishad, Yog-Shastra, Bramha-Vidya – all these at the same time. It reveals the innermost secret of the Divine Heart; it teaches the most practical method for bringing about perfect union (Yoga) among all the apparently diverse aspects of the complex human nature as well as union of the human life with the Life Divine; it offers the loftiest philosophical conception of the Absolute Reality (Brahma) and at the same time brings God and man so close to each other that the difference between them almost vanishes.

In it the Divine Artist appears to sing out His innermost heart to representative man (Nara-Avatara), whom He accepts as His fast friend and playmate, unveils the secrets about his inscrutable character to him, and teaches him the easiest way to elevate himself to His plane of existence – the plane of perfect joy and perfect sportsmanship. Shrimad Bhagavad Geeta is a finely musical as well as deeply metaphysical exposition by Bhagwan Shri Krishna himself of the spiritual significance of His own life-

story, of God playfully humanizing Himself and teaching man the art of divinising himself.

Sportive Spirit in Practical Life

The ideal of conduct which the Divine Player puts before man in the Geeta may at the outset be summarised thus:

"Cultivate the spirit of heroic and sweet sportsmanship in all your activities and in all the aspects of your life in this Divine world. Freely and modestly, calmly and fearlessly, joyfully and intelligently, participate in the mundane play of the Supreme Spirit, and with unfailing vigour and enthusiasm apply yourself to the execution of whatever duties He may allot to you in His playground.

Like a true sportsman, think not of profit and loss, victory and defeat, success and unsuccess, think not of the fruits of your actions, but think only of the duties divinely allotted to you and perform them in a way worthy of a chosen playmate of the Divine Player.

Don't weaken your mind and heart by entertaining thoughts and anxieties about the possible outer consequences of the actions which you find after due consideration to be your noble duty to perform; leave the consequences to the sweet and all-governing will of the Divine Captain of all worldly games; He will look after and regulate them in accordance with the scheme of His play.

You are only to assure yourself that some course of action has been allotted to you as your part of play in His play-field, and you should sincerely and earnestly apply your energy and intelligence to it out of love for the devotion to that Supreme Master of this cosmic play.

All work should be known and felt as His work, and all work should be delightfully performed for His sake, in a spirit of loving

and faithful service to Him.

Pure, whole-hearted dynamic love for the supreme Player Artist who has been eternally manifesting in the most artistic and sportive manner the infinite joy and glories of His transcendental nature in this ever-old and ever-new cosmic system, should be the governing principle of all human conduct.

It is this love for the Absolute, which should elevate human conduct from the plane of desire ridden wordly action to a higher plane of desireless joyful sport, from the plane of Karma to the plane of Leela, from the plane of matter to the plane of spirit.

The inner consequence of this cultivation of love for the Absolute Spirit, cultivation of the habit of performing duties in a sportsmanlike manner as a form of loving worship to the Divine Player, cultivation of the disposition of doing God's work in God's world for God's sake, is the progressive elevation of human nature to higher spiritual planes, the progressive union between the human character and the Divine character, leading ultimately to the realisation of Divinity in Humanity.

An Enlightened Outlook on Self and the World

What is the enlightened outlook on man and the world? In the Geeta, Shri Krishna unveils the true character of the Human self and gives a glorious picture of what man really is. He reveals that a man is essentially a Divine Spirit, though embodied in a psycho-physical organism.

Now, if we can fully and firmly believe in our hearts that we are immortal spiritual beings playing our allotted parts intelligently and voluntarily in an essentially spiritual world, that God is the true soul in everyone of us and the true Soul in which we live and move, that all the affairs of the world are divinely ordained and are the sportive self expression of One who is absolutely

perfect and blissful, can we then have any sense of diffidence or depression, any sense of weakness or impotency, any sense of fear or misapprehension, in the performance of duties divinely allotted to us in His playground? Should we not then be unhesitantly prepared to undertake any task, howsoever hazardous it may from external considerations appear to be, once we are convinced that it is our duty, that it is a part of Divine work allotted to us? God, who as the soul inspires from within and gives the sense of duty, is also the Regulator of all the external affairs, the Regulator of the consequences of all actions; hence, there can be no anxiety or misapprehension with regard to the result of actions.

A true believer in the Divine Regulation of the worldly affairs leaves the consequences to God and performs his duty with a cheerful spirit, with a sportive attitude of mind. He lives in the living present, untroubled by thought about the future. Every duty once it is accepted deliberately as such, is a sacred duty to him. To him, there is no distinction between religious duty and secular duty. Every work being God's work, he does every thing in a religious spirit for the sake of God, out of devotion to God, who is his own soul and the Soul of the world.

Our psycho-physical organism as it is constituted and the world as it appears in relation to this organism may demand from us various kind of services; we have to perform various kinds of work for the preservation of the bodily life.

The situations, in which men are placed in this world, are generally sources of troubles and anxieties and weaknesses to them. But all the complications of human life are greatly simplified, when a man's outlook to himself and the world he has to deal with is enlightened and spiritualized, when he learns to see God in himself and God in the world. Inwardly, he dwells in a realm of certainty behind all the uncertainties of the outer world in which his physical organism moves. When he has full

confidence in the Divine plan of the universe, he is not bewildered by any problems, he feels no anxiety about what may or may not be in the immediate or remote future. He knows that everything will be set right in the Divine scheme of the cosmic process. He does not care for his own future, for he is inwardly conscious of the Divinity of his soul. He is also sure that the destinies of all nations and societies and communities are ultimately governed by the artistic plan of the cosmic play of the Supreme Spirit. He can look with inward joy and tranquility upon the rise and fall of kingdoms and empires as well as upon his own victory and defeat in the battle of life. He joyfully accepts whatever is divinely ordained and he enjoys the sportive self-expressions of the Divine Artist in all the objects of his experience.

While his inner consciousness dwells in the plane of undisturbed joy and peace and calmness he in his outer life courageously faces all the problems, coolly and intelligently thinks over all questions, delightfully devotes his energy to the performance of whatever he decides to be. His duty on any occasion, fearlessly meets all difficulties which may stand in his way. Whatever may be the field of his work in accordance with his stature in the society, he never shirks his duty. He feels immense pleasure in doing all kinds of duties, because all works are to him forms of loving worship to the Supreme Spirit, the Soul of all souls. As he has no anxiety about the consequences of his actions or about the future prospects of himself or his society or nation, which are all safe in the Divine hand, all work is as good as play to him. In intelligently and faithfully carrying out the Divine command revealed through his conscience and reason, he feels that he is participating in the Divine plan.

(Extracts from *"Discourses on Hindu Spiritual Culture"* by
His Holiness Shri A.K. Banerjee
published by S. Chand & Co.)

एक सूफ़ी फ़कीर थे, शेख फ़रीद। उनकी प्रार्थना में एक बात हमेशा होती थी। उनके शिष्य पूछने लगे कि यह बात हमारी समझ में नहीं आती, हम भी प्रार्थना करते हैं, औरों को भी प्रार्थना करते देखा है, लेकिन यह बात हमें कभी समझ में नहीं आती, आप रोज-रोज यह क्या कहते हो कि हे प्रभु, थोड़ा दुख मुझे रोज देते रहना! यह भी कोई प्रार्थना है? लोग प्रार्थना करते हैं, सुख दो; और आप प्रार्थना करते हो, हे प्रभु, थोड़ा दुख रोज देते रहना। फ़रीद जी ने कहा कि सुख में तो मैं सो जाता हूँ और दुख मुझे जगाता है। सुख में तो मैं अक्सर परमात्मा को भूल जाता हूँ और दुख में मुझे उसकी याद आती है। दुख मुझे उसके करीब लाता है। इसलिए मैं प्रार्थना करता हूँ, हे प्रभु, इतना कृपालु मत हो जाना कि सुख-ही-सुख दे देना। क्योंकि मुझे अभी अपने पर भरोसा नहीं है। तू सुख-ही-सुख दे तो मैं सो ही जाऊँ! जगाने को ही कोई बात न रह जाए। अलार्म ही बंद हो गया। तू अलार्म बजाता रहना, थोड़ा-थोड़ा दुख देते रहना, ताकि याद उठती रहे, मैं तुझे भूल न पाऊँ, तेरा विस्मरण न हो जाए।

राम संदेश के नियम

1. आध्यात्मिक विद्या के गुप्त और अनुभवी रहस्यों तथा सदाचार–शिक्षा को सरल भाषा में जनता तक पहुँचाना हमारी राम संदेश पत्रिका का मुख्य उद्देश्य है।
2. राम–सन्देश में आत्मिक, नैतिक, सामाजिक तथा आध्यात्मिक उन्नति के लेख ही छपते हैं, राजनैतिक या रोमांचक लेख नहीं। रचनाओं में काट–छाँट करने अथवा छापने या न छापने की स्वतंत्रता सम्पादक को है।
3. राम संदेश का वर्ष जनवरी में आरम्भ होता है। चन्दा 20 बीस रुपये है। एक वर्ष से कम तथा आजीवन ग्राहक नहीं बनाये जाते। चन्दा दशहरा भंडारों में या मैनेजर, राम संदेश को, एस ई 297–शास्त्री नगर, ग़ाज़ियाबाद–201002 के पते पर दिसम्बर के अंत तक अवश्य भिजवा दें।
4. राम संदेश डाक द्वारा नहीं भेजा जायेगा। इसका वितरण भंडारों पर ही किया जायेगा। कृपया अपनी प्रति लेना न भूलें।

राम संदेश

रजिस्टर्ड ऑफिस

एस ई 297–शास्त्री नगर,

ग़ाज़ियाबाद–201002

मुद्रक, प्रकाशक व संपादक : श्री उमा कान्त प्रसाद

मुद्रण : अंकोर पब्लिशर्स (प्रा.) लिमिटेड, बी–66, सैक्टर–6, नोएडा–201301